संपादकीय

"हमें आजादी चाहिए।" इस वाक्य को पढ़कर किसी भी भारतीय को ज्ञात हो सकता है कि इसका प्रयोजन भारत की आजादी से है। बात बीसवीं सदी की है जब हमारा भारत देश गुलाम से स्वतंत्र होने की खुशी मना रहा होता है। अचानक से ढोल–तासे की आवाज सुनकर घर के लोग अनुमान लगा लेते थें कि दरवाजे पर आजादी का जश्न मनाने वाले की टोली है। सभी लोग बूढ़े–बच्चे और जवान इस जश्न का हिस्सा बन जाते हैं और कारवां ऐसे ही बढता चला जाता है। सन् 1947 से लेकर आजतक यह जश्न ऐसे ही जोर–शोर से मनाया जा रहा है। परन्तु भारत की आधी आबादी जिसे लोग कई नामों से जानते हैंः–महिला, स्त्री, नारी, औरत। ध्यान से सुनिए ये आज भी इस वाक्य को कहती नजर आती हैं।" हमें आजादी चाहिए"।

बीसवीं सदी की शुरुआत में जब आजादी का जज्बा हर भारतीय के अन्दर था। उस समय भारत की स्त्रियों ने भी बढ़–चढ़कर हिस्सा लिया था।

'मातृशक्ति' के प्रतीक के रुप में स्त्रियों ने देश के लिए अपना वक्त, धन, और प्राण दिए। असहयोग आन्दोलन, सविनय अवज्ञा आन्दोलन, स्वदेशी प्रचार, चरखा चलाना और खादी वस्त्र भन्डारों में काम करना जैसा बहुत कुछ स्त्रियों ने अति उत्साह से किया। घर से बाहर निकलकर सामाजिक–सार्वजनिक जीवन में प्रतिभागिता ने स्त्रियों में एक नए उत्साह का संचार किया। कई स्वदेशी आंदोलनों के लिए स्त्रियों ने अपने गहने दे दिए। स्त्रियां पर्दे से बाहर निकलीं और राष्ट्रीय परिदृश्य का हिस्सा बनीं। स्वाधिनता आन्दोलनों में स्त्रियों की भूमिका के साथ भारतीय स्त्री आन्दोलन का एक राष्ट्रीय स्वरूप बनता है। स्त्री को उसके सम्पूर्ण रूप में यदि कहीं अभिव्यक्ती प्राप्त हुई तो इसी युग में। कविता के साथ–साथ बाहर की दुनिया के द्वार उनके लिए खुल गए। पत्र–पत्रिकाओं के माध्यम से वे व्यापक रचनात्मक संसार से जुड़ी, उन्होंनें स्वयं पत्रिका भी निकाली। 'नारी 'पत्रिका जिसकी सम्पादक 'सुभद्रा कुमारी चौहान 'थीं अपने स्वरूप में बेहद प्रगतिशील थी। इस पत्रिका के एक लेख में कैलाशपति त्रिपाठी स्त्रियों के सम्पति में हिस्से की वकालत करते हुए उसे देश के लिए कल्याणकारी बताती हैं। सम्पति में स्त्री के अधिकार की बात उठाना अपने आप में क्रांतिकारी बात थी उस वक्त।

राष्ट्रीय आंदोलन में स्त्रियों की भरपूर भागीदारी ने उनके खुद के लिए स्वतंत्र फैसलों की कोई राह नहीं खोली उनकी जीवन शैली में कोई परिवर्तन नहीं आया। स्त्री को उसकी प्रतिभागिता केवल देवी, मां और शक्ति के नाम पर खपा दिया गया उसके श्रम को मजदुरी की तरह और उसकी हिस्सेदारी को सत्ता में हिस्सेदारी की तरह नहीं देखा गया। स्त्रियां स्वंय यह सब अपने देश के पुरुषों, अपने पतियों, भाईयों

और बेटों के लिए कर रही थीं। मां अपना हिस्सा थोड़े ही लेती है। वह सिर्फ सन्तान के हित में संघर्ष करती हैं त्याग करती हैं। इसलिए तमाम परिवर्तनों के बिच 'स्त्रियोचित ' जैसा था वैसा ही बना रहा। स्त्रियों के आजादी के आन्दोलन में भाग लेने से स्त्री अधिकारों के प्रति भी जागरुकता बढ़ी। जैसे भारत एक 'माता' बनी वहीं स्त्रियां भी एक मातृत्व शक्ति के रूप में सामने आयीं और पुरुषों का सहयोग किया। लेकिन अपने असली शत्रु की पहचान के बिना इस लड़ाई में आगे बढ़े हुए कदम पीछे जाने तय थें।

सम्पादक होना और सम्पादकीय लिखना बड़ी ही जिम्मेवारी का काम है ऐसा मैं मानती हूं। किसी विषय की खोज करना और उसे एक जगह एकत्रित करना ही सिर्फ सम्पादक का कार्य नही होना चाहिए। मेरा मानना है कि चिजों को एक जगह एकत्रित कर उसे सही सलामत संभालकर लम्बे समय तक रखना भी सम्पादक की जिम्मेवारी बनती है। इस कार्य को करने की उत्सुकता मेरे मन में आते ही मैंनें भी जिम्मेवारी निभाने की तरफ अपनी पहल शुरु की है। मैं स्वंय भी एक स्त्री हूं और स्त्री होने के जो गुण हमें प्रकृत ने प्रदान किये हैं उन गुणों के साथ अपने जीवन पथ पर अग्रसर हूं। स्त्री को लेकर समाज में अच्छा–बुरा, सही–गलत जो भी चलते आया है या जो चल रहा है उसे पाठक तक पहुँचाने का कर्तव्य एक नागरिक एवं एक शिक्षक होते हुए निभाने के तरफ मेरी पहल है। आशा करती हूं कि इस कार्य में मैं सही दिशा में आगे बढ़ पाऊंगी।

इस पत्रिका से सम्बद्ध सभी विद्वज्जन को हृदयतल से आभार ! मुझे पूर्ण विश्वास है कि आप सभी के सहयोग एवं गुरुजनों के आशिर्वाद से मैं अपने कर्तव्य पथ पर सही दिशा में आगे बढ़ती रहूंगी।

"सरस्वती–श्रुति महती न हीयताम।"

प्रधान सम्पादक

कंचन कुमारी